www.aisectuniversityjharkhand.ac.in | Follow us on:

AISECT UNIVERSITY™

JHARKHAND, HAZARIBAG AN AISECT GROUP UNIVERSITY

Recognized by : UGC

(M.A. History Hon's - Sem III)

(States in India)

Contact us:

8252299990

8404884433

AISECT University, Hazaribag

Matwari Chowk, in front of Gandhi Maidan, Hazaribag (JHARKHAND)-825301

www.aisectuniversityjharkhand.ac.in info@aisectuniversityjharkhand.ac.in

(States in India)

सल्तनतकालीन इतिहास के स्त्रोत

सल्तनतकालीन इतिहास के अध्ययन के लिए पुरातात्विक स्रोतों की अपेक्षा साहित्यिक स्रोतों ज्यादा उपयोगी सिद्ध होते है। इस्लाम धर्म के प्रचार–प्रसार के साथ ही अनेक अरब यात्री एवं धर्म–प्रचारक भारत आए। इनलोगों ने भारत के विभिन्न भागों का विवरण अपने ग्रंथो में प्रस्तुतत किया है, जो भौगोलिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन के लिए प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध कराते है। सिन्ध पर अरबों के आधिपत्य के पश्चात् भारतीय इतिहास से संबंधित ऐतिहासिक साहित्य अधिक मिलने लगते हैं।

स्रोतों का वर्गीकरण – मध्यकालीन भारतीय इतिहास के अध्ययन के लिए जो स्रोतों उपलब्ध है, उन्हे सुविधानुसार दो वर्गो में विभक्त किया जा सकता है– 1. साहित्यिक एवं 2. पुरातात्विक साहित्यिक स्त्रोतो के अंतर्गत सामान्य ऐतिहासिक ग्रंथों, जीवनियों, यात्रा–वृत्तांतो, प्रशासनिक दस्तावेजो आदि का उल्लेख किया जा सकता है। इनके अतिरिक्त, अनेक साहित्यिक रचनाएं, विशेषकर अमीर खूसरो की रचनाएं भी इतिहास के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण है। पुरातात्विक स्रोतों में स्मारको, अभिलेखों एवं सिक्कों का उल्लेख किया जा सकता है।

पुरातात्विक स्रोत – सल्तनतकालीन इतिहास के अध्ययन में पुरातात्विक स्रोतों की भी उपेक्षा नही की जा सकती। इस समय अनेक भवनों का निर्माण हुआ। इस समय के भग्नावशेषों को देखकर तत्कालीन कलात्मक प्रगति एवं राज्य की समृद्धि का अंदाज मिलता है। इस समय की अनेक महत्वपूर्ण इमारतें जैसे 'कुवत–उल–इस्लाम', कुतुबमीनार, अलाई दरवाजा, फीरोजशाह कोटला आदि कलात्मक विकास से हमें परिचित कराती है। सल्तनकाल में मस्जिदों एवं अन्य भवनों की दीवारों पर फारसी में अभिलेख भी खुदवाए गए, परंतु शाही अभिलेखों की संख्या बहुत कम है। अधिकांश अभिलेख व्यक्तिगत है तथापि उनमें शासकों के नामों और तिथियों का भी उल्लेख किया गया है। सल्तनतकालीन सिक्के भी इतिहास की जानकारी के एक प्रमुख स्रोतहै।

सल्तनतकालीन प्रशासनिक व्यवस्था

सल्तनत काल में भारत में एक नई प्रशासनिक व्यवस्था की शुरूआत हुई जो मुख्य रूप से अरब–फारसी पद्धति पर आधारित थी। सल्तनत काल में प्रशासनिक व्यवस्था पूर्ण रूप से इस्लामिक धर्म पर आधारित थी। उलेमाओं की प्रशासन में महत्वपूर्ण भूमिका होती थी। 'खलीफा' इस्लामिक संसार का पैगम्बर के बाद का सर्वोच्च नेता होता था। दिल्ली सल्तनत के सुल्तानों में अधिकांश ने अपने को खलीफा का 'नाइव' कहा। अलाउद्दीन खिलजी ने अपने को खलीफा का नाइव नहीं माना। मुबारक खिलजी पहला ऐसा सुल्तान था जिसने खिलाफत के मिथक को तोड़कर स्वयं को खलीफा घोषित किया। मुहम्मद तुगलक ने अपने शासन

काल के प्रारम्भ में खलीफा को मान्यता नहीं दी, पर शासन के अन्तिम चरण मे उसने खलीफा को मान्यता प्रदान कर दी।

सुल्तान– सुल्तान की उपाधि तुर्की शासकों द्वारा प्रारंभ की गयी/महमूद गजनवी पहला शासक था जिसने 'सुल्तान' की उपाधि धारण की। सुल्तान केन्द्रीय प्रशासन का मुखिया होता था। राज्य की पूरी शक्ति उसमें केन्द्रित थी। न्यायापालिका एवं कार्यपालिका पर सुल्तान का पूरा नियन्त्रण था। सुल्तान द्वारा चुना गया उत्तराधिकारी यदि अयोग्य है, तो ऐसी स्थिति में सरदार नये सुल्तान का चुनाव करते थे। सुल्तान सेना का सर्वोच्च सेनापति एवं न्यायालय का सर्वोच्च न्यायधीश होता था। सुल्तान शरीयत के अधीन ही कार्य करता था।

अमीर– सल्तनत काल में सभी प्रभावशाली पदों पर नियुक्त व्यक्तियों की सामान्य संज्ञा अमीर थी। अमीरों का प्रभाव सुल्तान पर होता था। अमीरों का प्रशासन में महत्वपूर्ण योगदान होता था। लोदी वंश के शासन काल में अमीरों का महत्व अपने चरमोत्कर्ष पर था।

मंत्रिपरिषद– सत्ता का प्रधान सुल्तान होता था फिर भी विभिन्न विभागों के कार्यो के कुशल संचालन हेतु उसे एक मंत्रिपरिषद की आवश्यकता पड़ती थी, जिसे सल्तनत काल में 'मजलिस–ए–खलवत' कहा जाता था। इसका सलाह मानने के लिए सुल्तान बाध्य नहीं होता था। मंत्रिपरिषद् में 4 मंत्री महत्वपूर्ण थे, वे निम्न है–

1. वजीर (प्रधानमंत्री) – सर्वप्रमुख होता था और अधिक अधिकार होते थे।

2. दीवान–ए–आरिज– आरिज–ए–मुमुालिक सैन्य विभाग का प्रमुख था।

3. दीवान–ए–इंशा– यह सुल्तान की घोषनााओं एवं पत्रों का मसविदा तैयार करता था।

4. दीवान–ए–रसालत– इस विभाग के कार्यो के बारे में विवाद है। कुछ इतिहासकारों के अनुसार यह धर्म विभाग से सम्बन्धित था।

सल्तनतकालीन अर्थ–व्यवस्था

सल्तनत काल में भारतीय अर्थ–व्यवस्था में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। प्रो0 हबीब के अनुसार पहले की 'सामंती अर्थ–व्यवस्था' तुर्क–अफगान–काल में 'शहरी अर्थ–व्यवस्था' में परिणत हो गई।

कृषि और पशुपालन – कृषि भारतीयों की जीविका का मुख्य आधार था। भारत की अधिकांश जनसंख्या कृषक ही थी। सल्तनत काल में कृषि–क्षेत्र का भी विकास हुआ। अलाउद्दीन खलजी, मुहम्मद–बिन–तुगलुक एवं फीरोज तुगलुक ने कृषि के विकास के लिए प्रयास किए। फीरोज ने सिंचाई के लिए अनेक नहरों का प्रबंध करवाया। अनाज के अतिरिक्त किसान फल–फूल भी उपजाते थे। कृषि के साथ–साथ पशुपालन भी होता था। पालतू पशुओं में गाय, बैल, बकरी, भेड, सूअर, घोड़े, ऊँट आदि।

उद्योग–धंधों का विकास– इस युग में अनेक प्रकार के उद्योग–धंधें का विकास हुआ। कारिगरों के एक दक्ष वर्ग का उदय हुआ, जिसने औद्योगिक केन्द्रों एवं नगरों में रहकर उद्योग–धंधों को विकसित किया। इस समय वस्त्र–उद्योग, धातु–उद्योग और चर्म–उद्योग के अतिरिक्त कागत, चीनी, शीशा तथा काष्ठ उद्योग का विकास हुआ। सूरत, पटना, बनारस, दिल्ली, आगरा, बंगाल आदि वस्त्र उद्योग के प्रमुख केन्द्र थे।

तकनीकी विकास– सल्तनत–युग में तकनीकी के क्षेत्र में अनेक विकास हुए। इनके कारण उद्योग–धंधों एवं व्यापार–वाणिज्य की प्रगति में सहायता मिली।

व्यापार–वाणिज्य की प्रगति– सल्तनत–काल में आंतरिक एवं विदेशी व्यापार का भी विकास हुआ। इब्नेबतूता दिल्ली को संसार की सबसे बड़ी व्यापारिक मंडी मानता है। भारत का चीन, ईरान, अरब, मध्य एशिया, यूरोप एवं अफ्रीका से व्यापारिक संबंध था।

नगरों का उदय – अनेक नगरों का उदय इस समय हुआ। पूरे देश में औद्योगिक, व्यापारिक एवं प्रशासनिक नगरों का जाल सा बिछ गया। अनेक बंदरगाहों का भी तटीय क्षेत्रों में उदय हुआ। इय समय के प्रमुख नगरों में दिल्ली, आगरा, लाहौर, मुल्तान, ढाका, पटना, बनारस, ग्वालियर आदि का उल्लेख किया जाता है। नगरों में व्यापारियों, कारिगरों और प्रशासनिक अधिकारियों का दबदबा था।

इस युग में आर्थिक संपन्नता का युग था, परन्तु इस आर्थिक संपन्नता का अधिकांश उपयोग कुलीन वर्गवाले ही करते थे। सामान्य लोग को लाभ नहीं मिल पाया। इस कारण उनकी स्थिति दयनीय बनी ही रही।

सल्तनतकालीन लगान व्यवस्था

बंटाई–बंटाई लगान निर्धारित करने की एक प्रणाली थी, जिसमें राज्य की ओर से प्रत्यक्ष रूप से जमीन की पैदावार से हिस्सा लिया जाता था। इसकी दो विधियाँ थीं – एक फसल तैयार होने के समय सरकारी अधिकारी कुल पैदावार का मूल्य निर्धारित करके करों को तय करते थे और दूसरा तैयार फसलों की माप तौल के आधार पर कर का निर्धारण किया जाता था। सल्तनत काल में निम्न तीन प्रकार की बंटाई विधि प्रचलन में थी –

1. खेत बंटाई – खड़ी फसल या बुवाई के बाद ही खेत बांटकर कर का निर्धारण करना।

2. लंक बंटाई – खेत काटने के बाद खलिहान में लाये गये अनाज से भूसार निकाले बिना ही कृषक एवं सरकार के बीच बंटवारा हो जाता था।

3. रास बंटाई – खलिहान में अनाज से भूसा अलग करने के बाद सरकारी हिस्से को निर्धारित किया जाता था।

बंटाई व हासिल प्रणाली सल्तनत के प्रत्यक्ष शासन क्षेत्र मे अपनाई गई थी।

मुक्ताई– सल्तनत काल में लगान निर्धारण की मिश्रित प्रणाली को 'मुक्ताई' कहा जाता था।

मसाहत – भूमि की नाम–जोख करने के उपरान्त उसके क्षेत्रफल के आधार पर उपज का लगान निश्चित किया जाता था। इस प्रणाली की शुरूआत अलाउद्दीन खिलजी ने की। दिल्ली सुल्तानों में सर्वप्रथम गयासुद्दीन तुगलक ने कृषि को प्रोत्साहन देने के विचार से नहरे बनवायी तथा कई बाग लगवाये।

सल्तनत काल में राज्य की समस्त भूमि 4 वर्गो में विभक्त थी–

1. खालसा भूमि – इस प्रकार की भूमि पूर्णतः केन्द्र के नियंत्रण में रहती थी। इस भूमि से कर वसूल करने के लिए राजस्व विभाग के पदाधिकारी चौधरी एवं मुकद्दम होते थे। प्रत्येक शिक में एक 'आमिल' नाम का अधिकारी होता था जो कर वसूल कर सुल्तान को भेजा करता था।

2. इक्ता की भूमि – इक्ता की भूमि की देख–भाल 'मुक्ती' करते थे। इस भूमि से 'मुक्ती' व 'वली' लगान वसूलते थे। लगान वसूल करने के बाद मुक्ती अपना खर्च अलग का शेष धन को सरकारी खजाने में जमा कर देता था। 'ख्वाजा' नाम का अधिकारी मुक्ती व वली के कार्यो का निरीक्षण करता था।

3. सामन्तों की भूमि – यह भूमि अधीनस्थ हिन्दू सामन्तों व राजाओं की भूमि थी जिसके बदले प्रतिवर्ष एक निश्चित मात्रा में धन सरकारी कोष में जमा करते थे।

4. इनाम व वक्फ – यह करमुक्त भूमि होती थी जो विशेष लोगों को दान में दी जाती थी। भूमि को प्राप्त करने वाले का भूमि पर वंशानुगत अधिकार होता था।

सल्तनत काल में किसानों को उपज का 1/3 से लेकर 1/2 भाग तक राज्य को कर के रूप में देना होता था। अलाउद्दीन के समय भूमि कर को 50 प्रतिशत कर दिया गया था। अलाउद्दीन एवं मुहम्मद तुगलक ने भूमि की पैमाइश के आधार पर लगान को निर्धारित किया। अलाउद्दीन ने दान के रूप में दी गई अधिकांश भूमि को छीन कर खालसा भूमि में परिवर्तित कर दिया। उसने लगान को दिल्ली के आस–पास के क्षेत्रों एवं दोआब से अनाज के रूप में वसूल किया। फिरोज तुगलक ने नवीन कर सिंचाई कर लगाया।

सल्तनतकालीन प्रान्तीय शासन–

दिल्ली सल्तनत अनेक प्रांतों मे बंटा था जिसे 'इक्ता' कहा जाता था। यहाँ का शासन 'नायब वली' व 'मुक्ति' द्वारा संचालित किया जाता था। वित्तीय मामलों में वली की सहायता 'ख्वाजा' नामक अधिकारी करता था। ख्वाजा नामक अधिकारियों की नियुक्ति बलवन ने इक्तादारों के भ्रष्टाचार को रोकने के लिए की थी।

स्थानीय प्रशासन – लगभग 14वीं शताब्दी में प्रशासकीय सुविधा के लिए इक्ताओं को शिकों (जिलों) में विभाजित किया गया। यहाँ का शासन अमील या नजीम अपने अन्य सहयोगियों के साथ करता था। एक शहर या सौ गांवों के शासन की देख–भाल 'अमीर–ए–सदा' नामक अधिकारी करता था। इसकी सहायकता के लिए मुतसर्रिफ, कारकून,

बलाहार, मुकद्दम, चौधरी, पटवारी, पियादा आदि होते थे। शासन की सर्वाधिक छोटी इकाई गांव होता था, जहाँ का शासन पंचायतें करती थी। गांवों में मुकद्दम (मुखिया), पटवारी व कारकून होते थे।

मुगलकालीन शासन व्यवस्था

मुगलकालीन प्रशासन के बारे कुछ महत्वपूर्ण कृतियों से जानकारी मिलती है। ये कृतियाँ है– आईन–ए–अकबरी, अकबरनामा, तबकाते अकबरी, आदि। इसके अतिरिक्त कुछ विदेशी पर्यटक जैसे रो, हॉकिन्स और टेरी आदि ने जानकारी दी।

मुगलकालीन शासकों में बाबर, हुमायूँ, औरंगजेब ने अपने शासन का आधार कुरान को बनाया, परन्तु इस परम्परा का विरोध करते हुए अबकर ने अपने को साम्राज्य की समस्त जनता का शासक बताया, उसने राजा को मनुष्यों में उत्तम एवं पृथ्वी पर ईश्वर की छाया व प्रतिनिधि बताया।

मंत्रिपरिषद– सम्राट को प्रशासन की गतिविधियों को भली भांति संचालित करने के लिए एक मंत्रिपरिषद की आवश्यकता होती थी, बाबर के काल में वजीर पद काफी महत्वपूर्ण था परन्तु कालान्तर में यह पद महत्वहीन हो गया। वजीर राज्य का प्रधानमंत्री होता था। अकबर के समय प्रधानमंत्री को 'वकील और वित्तमंत्री को 'वजीर' कहते थे।

वकील– सम्राट के बाद शासन के कार्यो को संचालित करने वाला सबसे महत्वपूर्ण अधिकारी वकील था।

दीवान या वजीर – फारसी मूल के शब्द दीवान का नियंत्रण राजस्व एवं वित्तीय विभाग पर होता था।

मीर बब्शी– इसके पास ''दीवानी आरिज' के समस्त अधिकार होते थे। मुगलों की 'मनसबदारी व्यवस्था' के कारण यह पद और भी महत्वपूर्ण हो गया था।

सद्र–उस–सद्र या सुदूर– यह धार्मिक मामलों, धार्मिक धन–सम्पत्ति एवं दान विभाग का प्रधान होता था। 'शरीयत' की रक्षा करना इसका मुख्य कर्त्तव्य था।

मीर समा– सम्राट के घरेलू विभागों का प्रधान होता था। यह सम्राट के दैनिक व्यय, भोजन एवं भण्डार का निरीक्षण करता था।

दरोगा–ए–तोपखाना– यह बन्दूकचियों एवं शाही तोपखाने का प्रधान होता था।

दरोगा–ए–डाक चौकी– यह सूचना एवं गुप्तचर विभाग का प्रधान होता था यह राज्य की हर सूचना बादशाह तक पहुँचाता था।

अन्य पदाधिकारी– मुस्तौफी– महालेखाकार, मीर बहरी– जल सेना का प्रधान, मीर–बर्र–वन अधीक्षक, मुशरिफ–राजस्व सचिव, मीर–ए–माल– राज्यभत्ताधिकारी आदि।

'मनसबदारी प्रथा'

मुगलकालीन सैन्य व्यवस्था पूर्णतः मनसबदारी प्रथा पर आधारित थी। वैसे अरबी भाषा के शब्द 'मनसब' का शाब्दिक अर्थ है 'पद'। अकबर द्वारा आरम्भ की गयी इस व्यवस्था में उन व्यक्तियों को सम्राट द्वारा एक पद प्रदान किया जाता था, जो शाही सेना में होते थे। दिये जाने वाले पद ाके 'मनसब' एवं ग्रहण करने वाले को 'मनसबदार' कहा जाता था। मनसब प्राप्त करने के उपरान्त उस व्यक्ति का शाही दरबार में प्रतिष्ठा, स्थान व वेतन का ज्ञान होता था। ऐसा कहा जाता है, कि मनसबदारी व्यवस्था मंगोल नेता चंगेज खाँ की 'दशमलव प्रणाली' पर आधारित थी।

'पद' या 'श्रेणी' के अर्थ वाले मनसब शब्द का प्रथम उल्लेख अकबर के शासन के 11 वर्ष में मिलता है, परन्तु मनसब के जारी होने का उल्लेख 1577 ई0 में मिलता है। मनसबदार के पद के साथ 1594–95 ई0 से 'सवार' का पद भी जुड़ने लगा। इस तरह अकबर के शासनकारल में मनसबदारी प्रथा कई चरणों से गुजर कर उत्कर्ष पर पहुँची।

अकबर के समय में सबसे छोटा मनसब 10 एवं सबसे बड़ा मनसब 10,000 का होता था, परन्तु कालान्त में यह बढ़कर 12,000 हो गया। शाही परिवार के शहजादों को 5000 से ऊपर का मनसब मिलता था। मनसब प्राप्त करने वाले मुख्यतः 3 वर्गो में विभक्त थे– 10 से 500 तक मनसब प्राप्त करने वाले 'मनसबदार' कहलाते थे। 500 से 2500 तक मनसब प्राप्त करने वाले 'उमरा' कहलाते थे एवं 2500 से ऊपर मनसब प्राप्त करने वाले व्यक्ति 'अमीर–ए–उम्दा' या 'अमीर–ए–आजम' कहलाते थे।

'आइनेकबरी' में 66 मनसबों का उल्लेख किया गया है, किन्तु व्यवहार में 33 मनसब ही प्रधान किये जाते थे।

मनसबदारों को वेतन नकद व जागीर दोनो में ही देने की व्यवस्था थी। कार्यकाल के समय मनसबदारों के मरने पर उसकी सम्पत्ति को जप्त कर लिया जाता था। मनसबदारों की जागीरें एक प्रांत से दूसरे प्रांत में स्थानान्तरित कर दी जाती थी। अकबर के समय कुल मनसबदारों की संख्या लगभग 1803 थी जो औरंगजेब के समय में बढ़कर 14,449 हो गई। अकबर के शासन काल में अंतिम चरण में यह नियम बनाया गया कि, किसी भी मनसबदार का सवार पद उसके जात पद से अधिक नहीं हो सकता।

मुगलकालीन राजस्व प्रणाली

मुगल काल के राजस्व के स्त्रोत मुख्यतः दो भागों में बंटे थे– केन्द्रीय एवं स्थानीय।

केन्द्रीय आय के महत्वपूर्ण स्त्रोत थे– भू–राजस्व, चुंगी, टकसाल, उत्तराधिकारी के अभाव, मे प्राप्त आय, उपहार, नमक पर कर एवं प्रत्येक व्यक्ति पर लगने वाला पॉल टैक्स या व्यक्ति कर। इन सब में 'भू–राजस्व' सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्त्रोत था।

भूमि कर के विभाजन के आधार पर मुगल साम्राज्य की समस्त भूमि 3 वर्गो में विभक्त थी –

1. खालसा भूमि – प्रत्यक्ष रूप से बादशाह के अधिकार क्षेत्र में रहने वाली खालसा भूमि से प्राप्त आय शाही कोष में जमा कर दी जाती थी। इस आय का उपयोग व्यक्तिगत खर्च पर राजा के अंगरक्षक एवं निजी सैनिक पर, युद्ध की तैयारी आदि पर किया जाता था। सम्पूर्ण साम्राज्य का लगभग 20 प्रतिशत क्षेत्र 'खालसा भूमि' के अन्तर्गत शामिल था। औरंगजेब के शासन काल के अंतिम दिनों में खालसा भू–क्षेत्रों को जागीरों के रूप में आवंटित किया जाने लगा।

2. जागीर भूमि – यह भूमि राज्य के प्रमुख कर्मचारियों को उनकी वेतन के बदले दी जाती थी। जब इस भूमि का केन्द्र के निरीक्षण में हस्तांतरण होता था तब इसे 'पायवाकी' कहा जाता था, भूमि प्राप्त करने वाले को भूमि से कर वसूलने का भी अधिकार मिला रहता था। पदमुक्त होने पर इस भूमि पर से उस व्यक्ति का अधिकार समाप्त हो जाता था। साम्राज्य की अधिकांश भूमि जागीर भूमि के अन्तर्गत होती थी।

3. सयूरगल व 'मदद–ए–माश' – इस प्रकार की भूमि अनुदान के रूप में धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति को दे दी जाती थी। इस तरह की अधिकांश भूमि अनुत्पादक होती थी। इस भूमि को 'मिल्क' भी कहा जाता था।

जहाँगीर ने 'अलतमगा' जागीर अनुदान प्रदान किये। यह जागीर वंशानुगत होता था।

मुगल शासकों में अकबर ने ही सर्वप्रथम भूमि तथा भूमि कर व्यवस्था को संगठित करने का प्रयास किया। उसने शेरशाह सूरी की राजस्व व्यवस्था को प्रारम्भ में अपनाया।

अकबर ने शेरशाह की तरह भूमि की नाप–जोख करवा कर, भूमि की उत्पादकता के आधार पर एक तिहाई भाग लगान के रूप में निश्चित किया।

अकबर के शासन काल के 15वें वर्ष लगभग 1570–71 ई0 में टोडरमल ने खालसा भूमि पर भू–राजस्व की नवीन प्रणाली जिसका नाम 'जाब्ती' था, को प्रारम्भ किया।

लगान निर्धारण की अन्य प्रणाली 'बटाई' या 'गल्ला बख्शी' (फारसी) मुगल काल की सर्वाधित प्राचीन प्रचलित प्रणाली थी। इस प्रणाली में किसानों को कर उपज या नकदी दोनों ही रूपों में देने की छूट होती थी, परन्तु सरकार का प्रयास राजस्व को नकद में लेने का ही रहता था। अकबर के शासन कल में लगान भूमि की वास्तविक उपज पर लगभग एक तिहाई भाग नकद व अनाज के रूप में वसूल किया जाता था। अकबर ने सूर्य के आधार पर एक संवत्

चलाया जिसे 'इलाही संवत्' कहा जाता है। यही फसली संवत् था इससे किसानों को भूराजस्व अदा करने तथा मुगल शासन को अपने राजस्व आलेख तैयार करने में सुविधा हुई।

शाहजहां ने अपने शासन काल में लगान पैदावार की 33 प्रतिशत से 50 प्रतिशत के मध्य में लगान लेना प्रारम्भ कर लिया था। इसने लगान वसूली के लिए 'ठेकेदारी प्रथा' को शुरू किया। शाहजहां प्रथम मुगल शासक था जिसने दक्षिण भारत में मुर्शिद कुली खाँ के सहयोग से भू–राजस्व व्यवस्था को संगठित करने का प्रयत्न किया। मुर्शीद कुली खाँ को 'दक्षिण का टोडरमल' कहा जाता था। औरंगजेब ने अपने शासन काल में 'नस्क प्रणाली' को अपनाया। भू–राजस्व की राशि उपज की आधी कर दी गयी। इसके समय जागीरदारी प्रथा एवं ठेकेदारी (भूमि की) प्रथा का काफी विस्तार हो चुका था। औरंगजेब ने हिन्दू राजस्व अधिकारी के स्थान पर मुस्लिम अधिकारी की नियुक्ति की। मुगल काल में कृषक 3 वर्गो में विभाजित थे– 1. खुदकाश्त 2. पाही काश्त 3. मुजारियान

किसानों को लगान के अतिरिक्त अन्य विविध प्रकार के उपकर अदा करने पड़ते थे। खेतो की पैमाइश करने वाले को एक दाम प्रति वीधा 'जाबिताना' कर देना पड़ता था। 'दहसेरी' नामक अन्य कर प्रति वीधा के हिसाब से वसूला जाता था। पशुओं, चारागाहों एवं वागों पर भी कर लगते थे। अकाल पड़ने पर लगान में छूट तथा तकावी दी जाती थी।

शिवाजी

शिवाजी का जन्म शाहजी भोंसले की प्रथम पत्नी जीजाबाई की कोख से 10 अप्रैल, 1627 ई. को शिवनेर के दुर्ग में हुआ था. शिवनेर का दुर्ग पूना से उत्तर जुन्नार नगर के पास था. उनकी जन्म–तिथि के सम्बन्ध में इतिहासकारों के बीच मतभेद है. कई जन्म–तिथियों का उल्लेख किया गया है जिनमें 20 अप्रैल, 1627, 19 फरवरी 1630 और 9 मार्च 1630 ई. विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं.

शिवाजी को हैदरअली और रणजीत सिंह की तरह नियमित शिक्षा नहीं मिली थी. उनकी माँ पैत्रिक जागीरदारी में ही रहती थीं. शाहजी भोंसले ने अपने विश्वासी सेवक दादाजी कोणदेव को शिवाजी का संरक्षक नियुक्त किया था. दादाजी कोणदेव एक वयोवृद्ध अनुभवी विद्वान् थे. उन्होंने शिवाजी की प्रतिभा को देखते हुए उन्हें मौखिक रूप से रामायण, महाभारत और अन्य धार्मिक ग्रन्थों से अवगत करवा दिया था. मानसिक विकास के साथ–साथ दादाजी कोणदेव ने शिवाजी को युद्ध–कला की शिक्षा दी थी. दादाजी कोणदेव से ही शिवाजी को प्रशासन का ज्ञान भी प्राप्त हुआ था. अतः जीजाबाई के अतिरिक्त दादाजी कोणदेव का प्रभाव शिवाजी के जीवन और चरित्र–निर्माण पर सबसे अधिक पड़ा था.

शिवाजी के चरित्र–विकास में गुरु रामदास की शिक्षा का भी प्रभाव था. रामदास शिवाजी के आध्यात्मिक पथ–प्रदर्शक थे. रामदास ने मराठों को संगठित करने और जननी एवं जन्मभूमि की रक्षा करने का सन्देश दिया था. उन्होंने धर्म, गाय और ब्राह्मण की रक्षा करने का आदेश दिया था. माँ, संरक्षक और गुरु के आदर्शों से प्रेरणा पाकर शिवाजी धीरे–धीरे साहसी और

निर्भीक योद्धा बन गए. वे धर्म, धरती और गाय की रक्षा के नाम पर एक राष्ट्र का निर्माण करने का स्वप्न देखने लगे. विदेशी सत्ता से मातृभूमि को मुक्त करने का वे संकल्प ले चुके थे. रौलिंसन ने लिखा है "मात्र लूट–पाट की चाह के स्थान पर शिवाजी ने विदेशियों के अत्याचार से देश को स्वतंत्र करने के उद्देश्य से अपना जीवन जिया था."

शिवाजी की शासन व्यवस्था

शिवाजी महान विजेता के साथ–साथ कुशल प्रशासक भी था। उसकी प्रशासनिक व्यवस्था काफी कुछ दक्षिणी राज्यों एवं मुगल प्रशासन से प्रभावित थी। मध्यकालीन शासकों की तरह शिवाजी के पास भी शासन के सम्पूर्ण अधिकार सुरक्षित थे। शासन कार्यो में सहायता के लिए शिवाजी ने मंत्रियों की एक परिषद जिसे 'अष्टप्रधान' कहते थे, की व्यवस्था की थी। लेकिन इन्हें किसी भी अर्थ में मंत्रिमंडल की संज्ञा नहीं दी जा सकती थी। ये मंत्री 'सचिव' के रूप में कार्य करते थे। ये प्रत्यक्ष रूप में न तो कोई निर्णय ले सकते थे न ही नीति निर्धारित कर सकते थे। इनकी भूमिका मात्र सलाहकार की होती थी। 'अष्टप्रधान' में पेशवा का पद सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं सम्मान का होता था। पेशवा राजा का विश्वसनीय होता था।

शिवाजी का अष्ट प्रधान

1. पेशवा – राज्य के प्रशासन एवं अर्थव्यवस्था की देख–रेख करता था।

2. सर–ए–नौबल (सेनापति) – मुख्य कार्य सेना में सैनिक की भर्ती संगठन एवं अनुशासन और साथ ही युद्ध क्षेत्र में सैनियों की तैनाती आदि।

3. मजमुआदार या अमाल – अमाल राज्य के आय–व्यय का लेखा–जोखा तैयार कर उन पर हस्ताक्षर करता था।

4. वाकयानवीस – यह सूचना, गुप्तचर एवं संधि – विग्रह के विभागों को अध्यक्ष होता था और घरेलू मामलों की भी देख–रेख करता था।

5. शुरूनवीस या चिटनिस– राजकीय पत्रों को पढ़ कर उनकी भाषा–शैली को देखना, परगनों के हिसाब–किताब की जांच करना आदि इसके प्रमुख कार्य थे।

6. दबीर या सुमन्त (विदेश मंत्री) – मुख्य कार्य विदेशों से आये राजदूतों का स्वागत करना एवं विदेशों से सम्बंधित संधि विग्रह की कार्यवाहियों में राजा से सलाह मशविश करना आदि।

7. सदर या पंडितराव– मुख्य कार्य धार्मिक कार्यो के लिए तिथि को निर्धारित करना, पापकर्म करने वालों एवं धर्म को भ्रष्ट करने वालों के लिए दण्ड की व्यवस्था करना, बाह्मणों में दान को बंटवाना एवं प्रजा के आचरण को सुधारना आदि।

8. न्यायाधीश– सैनिक व असैनिक तथा सभी प्रकार के मुकदमों को सुनने एवं निर्णय करने का अधिकार इसके पास होता था।

अंतिम दो अधिकारी पण्डितराव एवं न्यायाधीश के अतिरिक्त अष्टप्रधान के सभी पदाधिकारियों को समय–समय पर सैनिक कार्यवाहियों में हिस्सा लेना होता था। सेनापति के अतिरिक्त सभी प्रधान ब्राह्मण थे। इसके अतिरिक्त राज्य के पत्र व्यवहार की देखभाल करने वाले 'चिटनिस' और 'मुंशी' भी महत्वपूर्ण व्यक्ति थे।

❖ प्रान्तीय शासन – शिवाजी ने शासन की सुविधा के लिए 'स्वराज' कहे जाने वाले विजित प्रदेशों को 3 प्रान्तों में विभक्त किया –

1. उत्तरी प्रांत – इसके अन्तर्गत सूरत से लेकर पूना तक का क्षेत्र शामिल था। शिवाजी ने यहाँ का शासन पेशवा मोरोत्रिम्बक पिंगले को सौपा।

2. दक्षिणी प्रांत – इसमें समुद्र तटीय प्रदेश एवं तत्कालीन बम्बई के दक्षिण कोंकण का क्षेत्र शामिल था। शिवाजी ने सचिव अन्नाजी दत्तो को यहाँ का शासन सौंपा।

3. दक्षिणी–पूर्वी प्रांत – सतारा, कोल्हापुर, बेलगांव एवं भारवार क्षेत्र वाले इस प्रांत का शासन शिवाजी ने मंत्री दत्ताजी त्रिम्बक को सौंपा।

इन प्रांतो के अतिरिक्त बाद में जीते हुए कुछ क्षेत्री जैसे अपनी, जिंजी, वैलोर, अन्सी आदि प्रदेशों को एक अलग प्रांत, जिसे 'अव्यवस्थित प्रांत कहा जा सकता हैं, में संगठित कर इसका 'अधिग्रहण' सेना की देख–रेख में कर दिया।

शिवाजी ने अपने दुर्गो की सुरक्षा के लिए हवलदार, सरेनौबत एवं सवनिस नाम के अधिकारियों की व्यवस्था की थी। 'हवलदार' किले की आंतरिक व्यवस्था को देखता था। 'सरेनौबत' किले की सेना का नेतृत्व एवं उन पर नियंत्रण रखता था। 'सवनिस' किले की अर्थव्यवस्था पत्र–व्यवहार एवं भण्डार आदि की देख–भाल करता था। प्रायः सरेनौबत एवं हवलदार का पद मराठो को एवं 'सवनिस' का पद ब्राह्मणों एवं कायस्थों को प्रदान किया जाता था। शिवाजी के समय में प्रान्तों को परगनों में विभाजित किया गया था। जिसका शासक सम्भवतः सैन्य अधिकारी होता था। शिवाजी के समय में सरकारी कर्मचारियों एवं पदाधिकारियों को वेतन के रूप में नकद रूपये दिये जाते थे।

❖ सैन्य व्यवस्था – शिवाजी उन शासकों में से थे जिन्हें राज्यसत्ता का भोग वरदान में नहीं प्राप्त हुआ था। इन्हें शून्य से मराठा राज्य की स्थापना तक कठिन श्रम करना पड़ा जिसके लिए एक शक्तिशाली सेना आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य भी थी। शिवाजी की सेना तीन महत्वपूर्ण भागों में विभक्त थी– पागा सैनिक, सिलहदार एवं पैदल सेना। शिवाजी की मृत्यु के समय उसकी सेना में लगभग 45,000 पागा, 60,000 घुड़सवार एवं लगभग एक लाख पैदल सैनिक थे।

शिवाजी की सेना में गुप्तचर, तोपखाना एवं समुंद्री बेडों की भी व्यवस्था थी। सेना को जागीर के रूप में वेतन मिलने का कोई भी प्रमाण नहीं मिलता सेना के साथ युद्ध में स्त्रियों का जाना वर्जित था।

राजस्व के स्त्रोत – भूमिकर, चौथ, एवं सरदेशमुखी। व्यापार कर, उद्योग कर आदि। मिकर– मालिक अम्बर की कर व्यवस्था पर आधारित थी।

विजयनगर साम्राज्य

विजयनगर का शाब्दिक अर्थ है, 'जीत का शहर'। प्रायः इन नगर को मध्ययुग का प्रथम हिन्दू साम्राज्य माना जाता है। 14वीं शताब्दी में उत्पन्न विजयनगर साम्राज्य को मध्ययुग और आधुनिक औपनिवेशिक काल के बीच का संक्रान्ति–काल कहा जाता है। इस साम्राज्य की स्थापना 1336 ई0 में दक्षिण भारत में तुगलक सत्ता के विरूद्ध होने वाले राजनीतिक तथा सांस्कृतिक आन्दोलन के परिणामस्वरूप संगम पुत्र हरिहर एवं बुक्का द्वारा तुंगभ्रदा के उत्तरी तट पर स्थित अनेगुंडी दुर्ग के सम्मुख की गयी। विजयनगर साम्राज्य का नाम तुंगभद्रा नदी के दक्षिणी किनारे पर स्थित उसकी राजधानी के नाम पर पड़ा। उसकी राजधानी विपुल शक्ति एवं सम्पदा की प्रतीक थी।

विजयनगर साम्राज्य के संस्थापकों की उत्पत्ति के बारे में स्पष्ट जानकारी के अभाव में इतिहासकारों में विवाद है। कुछ 'तेलगू आन्ध्र' अथवा काकतीय उत्पत्ति मानते हैं, कुछ कर्नाटा (कर्नाटक) या होयसाला तथा कुछ काम्पिली उत्पत्ति मानते है। हरिहर और बुक्का ने अपने पिता संगम के नाम पर संगम राजवंश की स्थापना की। संगम राजवंश (1336–1485 ई0)

हरिहर प्रथम (1336–56 ई0) – संगम वंश के प्रथम शासक हरिहर प्रथम ने अनगोन्दी के स्थान पर नवीन नगर विजयनगर को अपनी राजधानी बनाया। उसने वादामी उदयगिरि एवं गूटी में स्थित दुर्गो को शक्तिशाली बनाया। उसने होयसल राज्य को अपने राज्य में मिलाया तथा कदम्ब एवं मदुरा पर विजय प्राप्त की। राज्य में कृषि विकास के लिए कार्य किया। 1356 ई0 हरिहर की मृत्यु हो गई।

बुक्का प्रथम 1356 –77 ई0 – हरिहर का उत्तराधिकारी उसका भाई बुक्का प्रथम सिंहासन पर बैठा। उसने मदुरा को अपने साम्राज्य में शामिल किया। सर्वप्रथम बुक्का ने ही वहमनी और विजयनगर साम्राज्य के मध्य बने विवाद के कारण कृष्णा नदी को बहमनी तथा विजयनगर साम्राज्य के मध्य की सीमा माना। बुक्का ने 'वेदमार्ग प्रतिष्ठापक' की उपाधि ग्रहण की। 1374 ई0 में बुक्का ने चीन में अपना एक दूतमंडल भेजा। 1377 ई0 में उसकी मृत्यु हो गई। हरिहर एवं बुक्का ने राजा व महाराजा की उपाधि ग्रहण नही की थी।

हरिहर (II) – 1377–1404 – विजयनगर राजसिंहासन पर महाराजाधिराज की उपाधि ग्रहण किया। मैसूर, आदि विजय प्राप्त की।

विजयनगर का प्रशासन

विजयनगर साम्राज्य के राजनीतिक स्वरूप के बारे में दो प्रकार के मत मिलते हैं। ए0के0शास्त्री के अनुसार – विजयनगर साम्राज्य एक केन्द्रीकृत राज्य था। इसके विपरीत बर्टनस्टेन विजयनगर को खंडित राज्य का दर्जा देते है।

केन्द्रीय व्यवस्था – विजयनगर साम्राज्य की शासन पद्धति राजतंत्रात्मक थी। राज्य एवं शासन के मूल मे राजा जिसे 'राय' कहा जाता था होता था। राजा के चुनाव में राज्य के मंत्री एवं नायक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते थे। राजा को राज्याभिषेक के समय प्रजापालन एवं निष्ठा की शपथ लेनी पड़ती थी। राजा के बाद 'युवराज' का पद होता था। युवराज राजा का बड़ा पुत्र व राज्य परिवार का कोई भी योग्य पुरूष बन सकता था। 'राज्य परिषद' राजा को सलाह देती थी तथा उसका राज्याभिषेक करती थी। राजा को सलाह देने के लिए बनी एक परिषद् में प्रांतीय गवर्नर, बड़े–बड़े नायक, सामंत, शासक, व्यापारिक निगमों के प्रतिनिधि सदस्य होते थे।

प्रशासनिक कार्यो मे सहयोग करने के लिए एक 'मंत्रिपरिषद' होती थी, जिसमें प्रधानमंत्री, मंत्री, उपमंत्री, विभागों के अध्यक्ष तथा राजा के कुछ नजदीक के संबंधी होते थे। विजयनगरकालीन मंत्रिपरिषद की तुलना कौटिल्य के मंत्रिपरिषद के साथ की जा सकती है। केन्द्र में दण्डनायक नाम का उच्च अधिकारी होता था। दंडनायक का अर्थ 'प्रशासन का प्रमुख' और 'सेनाओं का नायक' होता था। दण्डनायक को न्यायाधीश, सेनापति, गवर्नर या प्रशासकीय अधिकारी आदि का कार्यभार सौंपा जा सकता था। केन्द्र में एक सचिवालय की व्यवस्था होती थी जिसमें विभागों वर्गीकरण किया जाता था। इन विभागों में 'रायसम' या सचिव, कर्णिकम या एकाउन्टेंट होते थे। अन्य विभाग एवं उनके अधिकारी जैसे 'मनिय प्रधान', गृहमंत्री, मुद्राकर्त्ता, शाही मुद्रा को रखने वाला अधिकारी आदि थे।

प्रांतीय प्रशासन – विजयनगर साम्राज्य का विभाजन प्रांत, राज्य या मंडल में किया गया था। कृष्णदेव राय के शासनकाल में प्रांतो की संख्या सर्वाधिक 6 थी। प्रांतो में गवर्नर के रूप में राज परिवार के सदस्य या अनुभवी दण्डनायकों की नियुक्ति की जाती थी। इन्हें सिक्कों को प्रसारित करने, नये कर लगाने, पुराने कर माफ करने एवं भूमिदान करने आदि की स्वतंत्रता प्राप्त थी। प्रांत के गवर्नर से निर्धारित भू–राजस्व का एक निश्चित हिस्सा केन्द्र सरकार को देना होता था।

प्रांत को मंडल, एवं मंडल को 'कोट्टम' या जिले में विभाजित किया गया था। कोट्टम को 'वलनाडु' भी कहा जाता था। कोट्टम का विभाजन 'नाडुओं' में हुआ था। जिसकी स्थिति आज के परगना एंव ताल्लुका जैसी थी। नाडुओं को 'मेलग्राम' में बांटा गया था। एक मेलग्रा के अन्तर्गत लगभग 50 गांव होते थे। 'उर' या 'ग्राम' प्रशासन की सबसे छोटी इकाई थी। इस समय गांवों के समूह को स्थल एवं सीमा भी कहा जाता था। विभाजन का क्रम इस प्रकार था –

नायंकर व्यवस्था – इस व्यवस्था की उत्पत्ति के बारे में इतिहासकारों में मतभेद हैं। कुछ का मानना है, कि विजयनगर की सेना के सेनानायको को नायक कहा जाता था, कुछ का मानना है, कि नायक भू–सामन्त होते थे, उन्हें वेतन के बदल एवं स्थानीय सेना के खर्च को चलाने के लिए विशेष भू–खण्ड जिसे 'अमरस' कहा जाता था। चूँकि ये अमरस भूमि का प्रयोग करते थे इसलिए इन्हें 'अमरनायक' भी कहा जाता था। अमरस भूमि की आय का एक

हिस्सा केन्द्रीय सरकार के कोष के लिए देना होता था एवं इसी आय में से राजा की सहायता के लिए एक सेना का रख–रखाव करना होता था। नायक को अमरस भूमि में शांति सुरक्षा एवं अपराधों को रोकने के दायित्व का भी निर्वाह करना होता था। इसके अतिरिक्त उसे जंगलों को साफ करवाना एवं कृषि योग्य भूमि का विस्तार भी करना होता था। राजधानी में नायकों के दो सम्पर्क अधिकारी एक नायक की सेना का सेनापति और दूसरा प्रशासनिक अभिकर्त्ता, 'स्थानपति' रहते थे। अच्युत देव राय ने नायकों की उच्श्रृखला को रोकने के लिए 'महामंडलेश्वर' या विशेष कमिशनरों की नियुक्ति की थी।

****